International Journal of Academic Research and Development
ISSN: 2455-4197
Impact Factor: RJIF 5.22
www.academicsjournal.com
Volume 2; Issue 5; September 2017; Page No. 955-959

गुप्त राजवंश के समकालीन अन्य राजनीतिक शक्तियों की मुद्रायें : एक नवीन सर्वेक्षण

Dr Shyamsundar Meena
Assistant Professor, Department of History, Dyal Singh College, University of Delhi, Delhi, India

प्रस्तावना

गुप्तकाल (लगभग 250 ए.डी. से 550 ए.डी.) को प्रतिष्ठा एवं समृद्धि के शिखर पर पहुँचाने में गुप्त सम्राटों के अलावा भी विभिन्न राजनीतिक–गणतांत्रिक शक्तियों का सराहनीय योगदान रहा है। कला संस्कृति तथा व्यापार वाणिज्य सभी क्षेत्रों में गुप्त सम्राटों के अलावा ये शक्तियां भी प्रेरक तत्व रहीं। इसे अब नकारा नहीं जा सकता। अब तक विभिन्न शोधार्थी, विद्वान, लेखक अपने ग्रंथों में वाकाटक[1] पल्लवों[2], कदम्ब[3] शालंकायन, विष्णुकुंडी इत्यादि के सिक्कों के अस्तितव को या तो नकारते आये हैं या उनकी प्राप्ति नगण्य बताई है। परन्तु विभिन्न शोधों ने इस विषय पर पुनः लेखन की आवश्यकता पर बल दिया है। हम देखते हैं कि भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान गुप्त सम्राटों पर लेखन कार्य एवं उन्हें प्रकाश में लाकर उनके काल को स्वर्ण युग या क्लासीकल युग बताये जाने के साथ ही उन्हें विदेशी शक्तियों को पराजित करने वाली विजयी शक्ति के रूप में देखा गया। इस उत्साह व जोश में विद्वानों ने गुप्तों का वर्णन तो खूब बढ़ा चढ़ा कर किया लेकिन उनके आर्थिक–सांस्कृतिक–राजनैतिक विकास में समान रूप से सहयोग करने वाली अन्य शक्तियों पर कम प्रकाश डाला। इसका एक महत्वपूर्ण कारण था उस समय अन्य शक्तियों के अभिलेख, सिक्के व अन्य स्रोतों का कम प्राप्त होना। किन्तु नये पुरातात्विक साक्ष्यों की उपलब्धता ने इस पर बहुल प्रकाश डाला है।

हम विवेच्य अवधि में गुप्तों के सहगामी निम्नांकित शक्तियों का भी वर्णन पाते हैं, जिन्होंने इस युग को आर्थिक व सांस्कृतिक सशक्तता प्रदान करने में अमूल्य योगदान दिया, ये निम्नलिखित हैं–

(क) राजनीतिक शक्तियां–वाकाटक, नाग, मित्र, मघ, मौखरी, किदार, कोट इत्यादि।

(ख) गणतांत्रत्मक शक्तियां – आर्जुनायन, यौधेय, कुणिन्द, मालव, मद्रक, शिवि, लिच्छवी आदि।

(ग) विदेशी शक्तियां–कुषाण, शक, हूण इत्यादि।

(घ) दक्षिण भारतीय शक्तियां–पल्लव, कदम्ब, विष्णुकुंडी, शालंकायन, वृहत्फलायन, आभीर व अन्य।

हम उपर्युक्त वंशों के आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक शक्ति होने का साक्ष्य अब तक मुख्यतया गुप्त सम्राटों के अभिलेखों, मुद्राओं व समुद्रगुप्त की विजय गाथा प्रयाग प्रशस्ति में मामूली रूप में पाते हैं। किन्तु अब साहित्यिक विवरणों के अतिरिक्त मुद्राओं की उपलब्धता ने गुप्त युग की इन शक्तियों की नयी व्याख्यायें प्रस्तुत करने का अवसर दिया है।

अभी तक सिक्कों की अध्ययन परम्परा में वाकाटक वंश के सिक्कों का अभाव बताया जाता रहा है। लेकिन अब यह स्थापित हो चुका है कि गुप्तों के समकालीन महत्वपूर्ण शक्ति वाकाटकों ने भी सिक्के प्रचलित किये। इनके सिक्के प्राप्त होने से इनके इतिहास पर नया प्रकाश पड़ता है। हाल ही 2008 में भारतीय मुद्रा परिषद, बनारस में प्रकाशित लेख से स्पष्ट होता है कि वाकाटकों ने भी अपने सिक्के जारी किये थे।[4] लेख में उल्लेखित है कि सन् 1990 ईस्वी में अजय मित्र शास्त्री ने वाकाटकों के तांबे के सिक्कों को प्रकाश में लाने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। उन्होंने पृथ्वीसेन[5], नरेन्द्रसेन[6] एवं अन्य शासकों को उपाधि रहित सिक्कों को भी प्रकाश में लाने का कार्य किया।

प्रशान्त कुलकर्णी ने प्रवरसेन के सिक्कों को प्रकाश में लाने में उल्लेखनीय योगदान दिया।[7] बहुत से विद्वान ये मानते हैं कि इन सिक्कों पर वाकाटक काल का कोई साहित्यिक उल्लेख या शासक का नामोल्लेख नहीं है। परन्तु प्रो. शास्त्री ने 1990 ईस्वी में प्रथम बार वाकाटक सिक्कों को प्रकाशित करके इस विचार को चुनौती दी। ये सिक्के महाराज पृथ्वीसेन के बारे में बताते हैं। इसके अलावा शास्त्रीजी ने विभिन्न प्रकार के अनेक सिक्कों में अनेक उल्लेखनीय शासकों के बारे में बताया है। जैसे वृद्धि, जया और ना (नरेन्द्र) आदि।

वाकाटक काल के जो सिक्के वसीम, वत्सगुल्म के उत्खनन से प्राप्त हुये एवं जो अप्रकाशित थे, उन्हें बोर्कर[8] नामक विद्वान के द्वारा स्क्रेच और चित्रित करके प्रकाश में लाया गया, लेकिन उनकी ओर किसी विद्वान का ध्यान नहीं गया। उन सिक्कों को भी भारतीय मुद्रा परिषद के द्वारा एकत्रित करके प्रकाश में लाने का प्रयास विद्वानों ने किया है। हालांकि इन सिक्कों को बोर्कर ने बिना परीक्षण किये ही पोटीन धातु का बता दिया था, जबकि ये तांबे के है। इस प्रकार हम देखते है कि वाकाटकों ने अभिलेख ही जारी नहीं किये थे, बल्कि सिक्के भी जारी किये।

गुप्तों ने समकालीन अन्य राजनीतिक शक्तियों के अध्ययन की परम्परा में नागों का प्रमुख योगदान व स्थान है। पद्मावति (आधुनिक पद्मपवाया, मथुरा से 130 कि.मी. दक्षिण में) के नाग राजाओं ने, जो अभिलेखों के भारशिव (शिवलिंग कंधे पर धारण करने के कारण उन्हें भारशिव कहा जाता था) हैं, ताम्रमुद्राओं की मनोरंजक श्रृंखला छोड़ी है। इनके अग्र भाग पर राजा का नाम देने वाला लेख है और पृष्ठ भाग पर मयूर, त्रिशूल, पार्श्वशायी वृष और चक्र जैसे विभिन्न लांछन है, जो अधिकांशतः शैव हैं। समुद्रगुप्त द्वारा उच्छिन्न अन्तिम नागराजा गणपति के सिक्के विपुल मात्रा में मिलते हैं। अब भी मथुरा के मुद्रा विक्रेताओं के पास उनके सैकड़ों सिक्के देखे जा सकते हैं। नागमुद्राओं का भार 19 से 36 ग्रेन के बीच में है।[9]

कौशाम्बी के मघ शासकों ने ताम्बे के सिक्के प्रारम्भ किये जो भद्दे व कलाहीन हैं। सिक्कों के आकार अनियमित हैं और उनके लांछन भद्दे ढंग से बने हुए हैं। आशा है कि इन मुद्राओं के चिह्न कौशाम्बी के पुराने, सिक्कों के संकेतों से लिये गये हैं। ये वृष, त्रिकुट पहाड़ी और जंगल के भीतर पेड़ हैं। अब तक भद्रमघ, शिवमघ, वैश्रवण, भीमवर्मा, विजयमघ और शतमघ के सिक्के पाये गये हैं।[10]

भारतीय मुद्रा परिषद् के 2011 के जर्नल में प्रकाशित लेख[11] के

अनुसार जनवरी 2010 से अप्रेल 2010 के बीच चन्दनखेड़ा (भद्रावती तहसील, चन्द्रपुर जिला, महाराष्ट्र) उत्खन्न से नाग शासक वरहराज का उभार शैली का स्वर्ण सिक्का प्राप्त हुआ है। सिक्के के पृष्ठ भाग पर किनारे पर बिन्दुओं के निशान हैं। सिक्का एक समानान्तर रेखा द्वारा दो भागों में विभक्त है। रेखा के ऊपर बैठे हुए कूबड़ वाले बैल (नंदी) की आकृति दिखाई देती है। रेखा के ऊपर ही बायीं तरफ अर्द्धचन्द्र है। बैल ने अपनी दायी टांग उठा रखी है। सिक्के में बैल के ऊपर दो छेद किए हुए हैं, जो संभवतया उसे गले में आभूषण के रूप में पहचाने जाने के लिए किए गए थे। रेखा के नीच पाँचवी सदी की, ब्राह्मीलिपि में 'श्री वरहराज' लेख अंकित है। नल राजवंश के श्री वरहराज का यह सिक्का दूसरी बार प्रकाश में आया है। इससे पूर्व नल राजवंश के उभार शैली के 32 सिक्के एजेण्डा (Edenda) (जिला बस्तर, छत्तीसगढ़) से 1939 से प्राप्त हुए थे। उनमें से 29 स्वर्ण सिक्के वरहराज, एक भवदत्त और दो अर्थपति के थे।[12] लेख में आगे बताया है कि नल राजवंश पाँचवी से सातवीं सदी तक बस्तर से उड़ीसा तक फैला था। इस बात की संभावना व्यक्त की है कि यह सिक्का व्यापार आदि के द्वारा वहाँ पहुंचा हो। इस विषय पर अभी और शोध कार्य अपेक्षित है और संभव है आगे के उत्खन्न भी हमें नये स्रोत प्रदान करेंगे जिससे और स्पष्ट व्याख्या हो सकेगी।

श्री एल.एस. निगम[13] ने नवम्बर 1980 ई. में माडागुड़ा, जिला कालाहांडी, उड़ीसा में उभार शैली (Repousse) के दो प्रकार के सोने के सिक्के प्राप्त किये। जो प्रसन्नामात्र नामक स्थानीय शासक के समकालीन हैं। इन्हें उन्होंने दो भागों में बांटा हैं–छोटे सिक्के व बड़े सिक्के। इनसे तीन शासकों के बारे में जानकारी मिलती है–वरहराज, स्तंभ, प्रसन्नामात्र। सिक्कों में गरूड़, चक्र के चिह्न के साथ भालू व बैल के भी चित्र हैं। शुरूआती सिक्कों पर गरूड़ अंकित होने से लगता है कि पहले यहां गुप्तों का आधिपत्य था, परन्तु बाद में वह साम्राज्य स्वतंत्र हो गया व गरूड़ सिक्कों से लुप्त हो गया एवं गरूड़ के स्थान पर चक्र का लांछन अपनाया जो वैष्णव धर्म का समर्थक है। यह संभवतः गुप्त सम्राटों के धार्मिक मूल्यों का प्रभाव था। इन सिक्कों का नल सिक्कों से क्या सम्बन्ध था? इस पर भी अन्वेषण व मजबूत प्रमाण की आवश्यकता है।

इसी कालावधी में हम वीरसेन और अच्युत के सिक्के भी पाते हैं। उत्तर प्रदेश में वीरसेन नामक एक राजा के सिक्के पाये गये हैं, इनमें अग्र भाग पर जंगले में पेड़ है और पृष्ठ भाग पर राजा के नाम के साथ लक्ष्मी की मूर्ति। अहिच्छत्र (बरेली, जिला यू.पी.) में चौथी शती ई. के मध्य में राजा अच्युत शासन कर रहा था। उसने प्रचुर ताम्र मुद्रायें प्रचारित की। इनके एक ओर अच्युत के अक्षर हैं और दूसरी ओर चक्र के। इसकी कुछ दुर्लभ मुद्राओं पर केन्द्र में उसकी आवक्ष मूर्ति है जिसके दोनों ओर क्रमशः अ और च्यू के अक्षर है। लगभग 350 ई. में समुद्रगुप्त ने इस राजा का उच्छेद किया।[14]

पंजाब के मित्रवंशीय शासकों के सिक्के तांबे के बने हैं और कुछ उनमें से दुर्लभ कांसे के हैं, जिनका आकार गोलाकार है। अधिकांश सिक्के टंकण तकनीक द्वारा निर्मित किये गये हैं, लेकिन उनमें से कुछ सिक्के छापे के द्वारा बने हुए प्रतीत होते हैं। ये सिक्के मुख्यतया दो श्रेणियों में बांटे हैं। एक श्रेणी वह है जिनका वजन 23.0 से 37.4 ग्रेन है और आकार में 5 इंच से 8 इंच तक प्राप्त है। ये मोटे और पतले दोनों प्रकार के हैं। दूसरी श्रेणी वाले सिक्कों का वजन 51 से 71 ग्रेन तक है और आकार .6 से .75 इंच तक प्राप्त है। ये टुकड़े पंजाब के होशियारपुर में पाये गये हैं। ये दो प्रकार की विशेष धातु के हैं। उन पर द्विभाषीय आलेख है, जो अग्र भाग में खरोष्ठी और पृष्ठ भाग में ब्राह्मी लिपि में है।[15]

कुषाण आधिपत्य को समाप्त करने के प्रयास तथा अपनी स्वतंत्रता प्राप्त करने वाले बहुत से गणतंत्रों ने लगभग 200 ई. तक अपने सिक्के फिर से चालू कर दिये थे। हालांकि पहले की तुलना में इनके सिक्के कम मात्रा में मिले हैं। और प्रभाव क्षेत्र भी उतना नजर नहीं आता परन्तु ये अपने अस्तित्व के लिए अब भी संघर्ष करते नजर आ रहे है।

आर्जुनायन, मालव, यौधेय, कुणिन्द, शिवि इत्यादि विभिन्न गणतंत्रों के प्रचुर मात्रा में सिक्के मिलने से इनके इतिहास का पुनः निर्माण हो सका है। सिक्कों के प्राप्ति स्थल और साहित्य संयुक्त रूप से यह घोषित करते हैं कि यहां के मूल निवासी त्रिकोणीय रूप से दिल्ली, जयपुर और आगरा में रहते थे।[16]

आर्जुनायनों के सिक्के कम संख्या में उपलब्ध हैं[17] और तांबे के ही बताये गये हैं। श्री कल्याणकुमार दास गुप्ता ने नीदरलैण्ड के श्री जे.लिंगन द्वारा एकत्रित किये सिक्कों में से आर्जुनायनों के चांदी के सिक्के खोज निकालने की बात की है।[18] इन्होंने आर्जुनायनों के सिक्कों को दो भागों में बांटा है। पहले भाग के सिक्कों में अग्र भाग पर खड़े हुए सांड का चित्र है जबकि दूसरे भाग में वर्णन नहीं मिलता। प्रथम श्रेणी जिसमें आकृतियों के टुकड़े सम्मिलित हैं और एक खड़े हुए बैल की आकृति बांयी तरफ स्थित है। दूसरी श्रेणी में अग्र भाग पर माल ढोते हुए बैल की आकृति है और इसके पृष्ठ भाग पर एक हाथी है जो अपनी सूंड ऊपर किये हुए हैं। ये दूसरी श्रेणी से संबंध रखता है जो कबीले के द्वारा जारी किया गया था।

लगभग 200 ई. में स्वतंत्र होने वाले गणतंत्रों में यौधेय सबसे अधिक शक्तिशाली व प्रभावशाली थे तथा उनके सिक्के सबसे विस्तृत प्रदेशों में मिलते हैं और प्रचूर हैं।[19] यौधेय ताम्र मुद्राओं की तौल और रचना दोनों में कुषाणों के सिक्कों के साथ घनिष्ठ सादृश्य है। तीसरी शदी ई. के यौधेय जन सतलज और व्यास के ऊपरले कांठे में आ बसे थे।[20] क्रमशः यौधेय सिक्कों के प्राप्ति स्थल उनके उत्तर पश्चिमी भारत से राजस्थान की तरफ स्थानान्तरण पर भी प्रकाश डालते हैं। उनके अग्र भाग और पृष्ठ भाग पर बनी मूर्तियां कुषाण सिक्कों की मूर्तियों से मिलती जुलती हैं, किन्तु इनमें कुषाण मूल प्रकार के खड़े राजा का स्थान कार्तिकेय ने ले लिया है, जो यौधेयों का इष्टदेव था। पृष्ठभाग की मूर्ति निःसंदेह कुषाण मुद्राओं की होलियास या माओं मूर्ति का स्मरण दिलाती है, किन्तु इसके साथ बने कलश और शंख के चिह्न स्पष्ट कहते हैं कि यह लक्ष्मी की मूर्ति है। नई यौधेय मुद्रायें विदेशी यूनानी और खरोष्ठी अक्षरों को छोड़कर स्वदेशी ब्राह्मी का प्रयोग आरम्भ करती हैं। इनमें अग्र भाग पर 'यौधेय गणस्य जय'' का लेख निःसंदेह इनको जारी करने वालों की उनके भूतपूर्व अधीश्वरों पर विजय का संकेत करता है।[21]

लगभग 200 ई. में कुणिन्द गणतंत्र के सिक्के भी पुनः मिलते हैं। तौल और रचना में कुषाण सिक्कों के साथ इनका सामान्य सादृश्य है। इनमें अग्र भाग पर राजा की खड़ी मूर्ति का स्थान त्रिशूलधारी शंकर की मूर्ति ने लिया है। पृष्ठ भाग पर प्राक् कुषाण कुणिन्द सिक्कों में पाये जाने वाले मृग, षट्कूट पहाड़ी, जंगले में पेड़, पताका, सर्पाकार रेखा के अधिकांश लांछन हैं। खरोष्ठी और यूनानी का स्थान ब्राह्मी लिपि ले लेती है। यौधेय और कुणिन्दों की ताम्र मुद्राओं का औसत तौल मान लगभग 160 ग्रेन है।[22]गढवाल–देहरादून भू–भाग से कुणिन्दों के कुछ तांबे के सिक्के प्राप्त हुए हैं, जो लिपि के आधार पर दूसरी–तीसरी सदी ईस्वी के हैं। इन सिक्कों पर एक ओर त्रिशूलधारी खडे हुए शिव का अंकन है और ब्राह्मी अभिलेख है। दूसरी ओर कुणिन्द के पूर्व के सिक्कों पर पाये जाने वाला ही लांछन है किन्तु उनके संयोजन में थोड़ी भिन्नता है।[23] इन सिक्कों में आये परिवर्तन के आधार पर लगता है उनकी शासन व्यवस्था राजन्य परिपाटी से हटकर देवार्पित राज्य

करने वाली हो गई थी।

मध्य राजस्थान में मालवों ने इस काल में लगभग 400 ई. तक अपने सिक्के जारी रखे। पहले की भांति उन्होंने केवल ताम्र मुद्राये ही निकाली और ये आश्चर्यजनक रूप से लघु और अच्छी तरह से निर्मित नहीं है। उनमें भारी से भारी मुद्रा का भार 40 ग्रेन से अधिक नहीं है और हल्की से हल्की 1.7 ग्रेन की है। इनका औसत भार लगभग 10 ग्रेन है जो ब्रिटिश युग की चांदी की दुअन्नी के आधे भार से भी कम है। पहले सिक्कों पर 'मालवानां जयः' का पुराना लेख अपनी सत्ता बनाये रखता है और कुछ सिक्कों का सांचा काटने वाली की गलती से उल्टा हो गया है। इस युग की पिछली मालव मुद्राओं पर मजुप, मपोजय, मगजश आदि रहस्यमय लेख हैं। इनकी अब तक संतोषजनक व्याख्या नहीं की जा सकी है।[24] अतः और शोध कार्य अपेक्षित है।

गुप्तों के समकालीन विदेशी शक्तियों में पंजाब में पिछले कुषाण शासक कनिष्क तृतीय और वासुदेव द्वितीय की स्वर्ण मुद्रायें प्राप्त हुई हैं। ये सिक्के पहले के कुछ कुषाण नमूनों से घनिष्ठ साम्य रखते हैं। अग्र भाग पर राजा वेदी पर बलि प्रदान कर रहा है, इसके साथ ही यूनानी में लेख है जो उत्तरोत्तर अधिकाधिक भ्रष्ट होता जाता है। इन पर ब्राह्मी अक्षरों का प्रवेश हो जाता है।[25] पृष्ठ भाग के दो रूप मिलते हैं। एक में शिव अपने नंदी के पास खड़े हैं जैसा कि वासुदेव प्रथम के सिक्कों पर है और दूसरे में अर्दोक्षो (ईरानी धनदेवी, लक्ष्मी) सिंहासन पर बैठी है, जैसा हुविष्क के सिक्कों पर है।

350 ई. में शक्ति प्राप्त करने वाले किदार कुषाणों या छोटे किषाणों की मुद्राओं का प्रकार पूर्ण रूप से सासानी है। अग्र भाग पर राजा की आवक्ष मूर्ति है, उसने मुकुट का एक ग्लोब धारण किया है। पृष्ठ भाग पर एक अग्नि वेदी है, इसके दोनों ओर एक–एक सेवक हैं। लेख पह्लवी अक्षरों में है।[26]

शक रजत मुद्राओं में अग्र भाग पर राजा की आवक्ष मूर्ति है। इससे पहले आवक्ष मूर्ति में शासक का वास्तविक चित्र व आयु बढने में परिवर्तन मुद्राओं में प्रदर्शित हुए हैं। परन्तु बाद में यह मूर्ति स्थिर सी हो गई। सिक्कों के पृष्ठ भाग पर वृत्ताकार ब्राह्मी लेख है जिसमें बड़ी सावधानी से न केवल शासक के बल्कि उसके पिता के भी नाम और उपाधि का उल्लेख है। जीवदामा की मुद्रा पर राजा की आवक्ष मूर्ति के पीछे उसके जारी होने की तिथि दी होती थी, जिससे राज्य कालों की शुद्धता से जांच करने में बड़ी सहायता मिली।[27]

क्षत्रप सिक्कों पर पृष्ठ भाग में त्रिकूट पहाड़ी है जिस पर दूज का चन्द्रमा प्रदर्शित है। पहाड़ी के एक ओर सूर्य और दूसरी ओर चन्द्रमा है। पश्चिमी क्षत्रपों के चांदी के सिक्कों की औसत तोल लगभग 35 ग्रेन है। गुप्तों और हूणों के चांदी के सिक्के क्षत्रपों के नमूने पर आधारित हैं, इनका तोलमान भी वही है। कुछ क्षत्रप शासकों ने ताम्र मुद्रायें भी चलाई, किन्तु प्रायः इन पर राजा का कोई नाम नहीं है। सामान्यतः इन पर अग्र भाग में हाथी है और पृष्ठ भाग पर त्रिकुट पहाड़ी, जिसके एक ओर सूर्य और दूसरी ओर चन्द्रमा है, नीचे इसके जारी करने की तिथि। इससे हम इन मुद्राओं को शक क्षत्रपों की ही मुद्रा कह सकते हैं।[28]

हूणों ने चांदी–सोने की कई मुद्रायें चलाई, किन्तु उनमें कोई भी मौलिकता नहीं थी।[29] उनकी सबसे पहली मुद्रायें सासानी साम्राज्य के विजित प्रान्तों में प्रचलन के लिए ढाली गई थी। अतः वे सासानी मूल प्रकार का गहरा अनुसरण करती हैं। ये पतली और बड़ी हैं। इनके अग्र भाग पर सासानी आवक्ष मूर्ति तथा पृष्ठ भाग पर वेदी और अग्नि सेवक है। जब हूणों ने अफगानिस्तान जीता और वे पंजाब में प्रविष्ट हुए तो इस नमूने में शंख, चक्र और त्रिशूल जैसे हिन्दू चिह्नों को प्रविष्ट कर, इसे शनैः शनैः भारतीय बनाया गया जिस पर लेख पह्लवी के स्थान पर ब्राह्मी में लिखा जाता था। जब हूणों ने पंजाब और कश्मीर जीता तो उन्होंने सीधी ओर खड़े राजा तथा उल्टी ओर बैठी देवी के कुषाण मूल प्रकार का गहरा अनुसरण करती हुई ताम्र मुद्रायें भी निकाली। मध्य भारत की विजय के साथ हूण, गुप्तों की मुद्राओं के सम्पर्क में आये। उन्होंने कोई स्वर्ण मुद्रा नहीं निकाली। वे चांदी और तांबे के गुप्तों का गहरा अनुसरण करने वाले सिक्के चलाकर संतुष्ट रहे। रजत मुद्राओं पर अग्र भाग में राजा की आवक्ष मूर्ति है और पृष्ठ भाग पर आधे हिस्से में एक लांछन दिखाया गया है और निचले आधे हिस्से में राजा का नाम है।

सासानी प्रकार के नमूने के पतले, चौड़े टुकड़ों को जिस पर शाहिजबुल का लेख है, प्रायः तोरमाण का बताया जाता है। तोरमाण के उत्तराधिकारी मिहिरकुल ने गुप्त सिक्कों का अनुसरण करने वाले कोई सिक्के नहीं चलाये। यह इस बात का स्पष्ट साक्ष्य है कि गुप्तों के प्रांतों पर उसका देर तक अधिकार नहीं रहा। उसकी ताम्र मुद्राओं का उल्टा पार्श्व उसकी शैव धर्म में आस्था का प्रमाण है, इनके ऊपर के भाग में वृष है और निचले भाग में 'जयसु वृष' लेख।

गुप्तों के समकालीन अन्य राजनीतिक शक्तियों के संदर्भ में दक्षिण भारत में पुरातात्विक स्रोत नये रूप में सामने आ रहे हैं। जिससे उत्खन्न व पुरातात्विक सामग्रियों को संरक्षण देने का नजरिया भी परिपक्क हो रहा है। अभी तक इनका वर्णन प्रयाग प्रशस्ति व अन्य गुप्त स्रोतों में अन्यथा पाया जाता था।

आलोच्यावधि में नये शोधपत्रों के माध्यम से हमें पल्लवों, कदम्बों, विष्णुकुंडी, शालांकायन व अन्य वंशों के सिक्कों की जानकारी प्राप्त होती है। कुछ समय पहले तक शालंकायन मुद्रायें ही अस्तित्व में बताई जाती रही हैं एवं दैनिक व्यवहार में लेन–देन का प्रचलन होने से सामान्य दैनिक व्यवहार में मुद्राओं के प्रचलन की आवश्यकता को आवश्यक नहीं होने की बात कही जाती रही।[30] हालांकि वस्तु विनिमय की परम्परा प्रचलित थी, परन्तु सिक्कों के भी प्रचलन के पर्याप्त साक्ष्य हमें मिलते है।

हाल ही 2008 में भारतीय मुद्रा परिषद के द्वारा जोस जैकब ने वनवासी के कदम्बों के सिक्कों पर लिखित लेख प्रकाशित किया है।[31] उसके अनुसार कदम्बों के जो सिक्के प्राप्त हुए हैं वे प्राचीन तुंगभद्रा नदी के तट पर तथा उसकी सहायक नदी के पास मिले हैं, जो बनवासी के पास ही बहती है। ये सिक्के जून 2007 से जुलाई 2008 तक किये गये उत्खन्न कार्य के दौरान प्राप्त हुए हैं। ये सिक्के दो भागों में प्राप्त हुए हैं। ये सिक्के ना तो अभी तक देखे गये थे और ना ही उनका कोई रिकॉर्ड था। इन सिक्कों के दो प्रकार हैं। इनमें से एक पर एक भाग में निरीक्षण में सांड की आकृति पाई गई व दूसरे पर नहीं पाई गई है। बैल की आकृति वाले सिक्कों को यहां लिया जा रहा है। इनका आकार सातवाहनों के पोटीन के सिक्कों जैसा था और ये मिश्र धातु से बने हुए हैं, किन्तु ये सातवाहन सिक्कों के बजाय पतले हैं और कम भारी हैं। कुछ सिक्कों के सांड के पिछले भाग पर पेड का चित्र है लेकिन कुछ सिक्कों में एक ही तरफ सांड व सामने पेड का चित्र है। सिक्कों के निचले भाग में नदी का लांछन है। सांड का चित्र सातवाहन, पल्लव, विष्णुकुंडी वंश के सिक्कों में प्राप्त सांड से अलग है। कुछ सिक्कों में सांड पतला है कुछ में वास्तविक।

शालंकायन वंश के छह सिक्के 1959 ई. में आन्ध्रप्रदेश के राजमुन्दी एरिया, गोदावरी नदी से पाये गये थे। वे दो तरह के थे– एक छोटा व एक बड़ा। दोनो गोल थे और तांबे के थे। मुख भाग पर बैल का चित्र तथा पृष्ठ भाग पर पांचवी सदी की ब्राह्मी लिपि

प्राकृत भाषा में मिलती है।[32] ये छह ताम्र मुद्रायें चन्द्रवर्मा नामक शालंकायन राजा की हैं।[33]

विष्णु कुंडी वंश के सिक्कों के श्री एम. अहमद अली ने चार प्रकारों के बारे में बताया है।[35] प्रथम प्रकार का सिक्का चांदी का है, जिसका वजन 5.5 ग्रेन तथा आकार 1.5 सेन्टीमीटर है। दूसरे प्रकार का सिक्का तांबे का है, जिसका आकार पतला है और इण्डो सासानी प्रकार का है। इसके पृष्ठ भाग पर दीवट (लैम्प स्टैंड) नहीं है जो इस प्रकार के सिक्कों की मूल पहचान है। इस पर केवल शंख व सूर्य की किरणों का अंकन है। तीसरे प्रकार के सिक्के कांसे के है जो विष्णुकुंडी वंश की परम्परागत शैली में बने हुए हैं। चौथी प्रकार के सिक्कों की खोज अहमद अली का नया संग्रह है। इसमें सांचे में ढला हुआ सिक्का, जिसका वजन 7 ग्राम, आकार 1.8 से. मी. है जो तांबे व टिन से बना है। जिसके मुख पृष्ठ पर सिंह की आकृति तथा पृष्ठ भाग पर शंख, दीवट तथा सूर्य किरणों का अंकन है।

येलेश्वरम की खुदाई और सिंह प्रकार के सिक्के श्री ए. वाजिद खान ने खोजे हैं।[36] ये विष्णु कुंडी वंश के शासक विक्रमेन्द्र वर्मा (530 से 544 ई.) के बारे में बताते हैं। सामान्य रूप से बने सिक्के जो कि सांचेदार नहीं हैं, यहां की स्थानीय शैली को दर्शाते हैं, जबकि सांचेदार शैली में बने सिक्के इन सिक्कों पर विदेशी प्रभाव को दर्शाते हैं। कुछ विद्वानों ने इस सिक्कों को पल्लवों का मानते हुए इन पर पडे प्रभाव को विदेशी प्रभाव के रूप में देखने का प्रयास किया है क्योंकि पल्लवों के नाम की समानता पर्सियां के निवासी पह्लवों के नामों से मिलती है।

इलियट[37] महोदय ने अपनी पुस्तक 'दक्षिण भारत के सिक्के' में पल्लव कालीन सिक्कों के बारे में बताया है। उनके अनुसार ये सिक्के छोटे, अनियमित, गोलाकार व तांबे के पतले टुकड़ों के रूप में मिले हैं, जिन पर मुख पृष्ठ पर वृषभ है व कुछेक पर कुछ अक्षरों का अंकन है, पृष्ठ भाग पर वृक्ष, पानी का जहाज, तारे, मछली व केकड़ा आदि का अंकन है। लेकिन सबसे उल्लेखनीय लक्षण इस कला में जानवरों का अंकण (चित्रण) है जो कि एक विशेष ध्यान देने योग्य तथ्य है। इलियट तांबे के आठ सिक्कों के बारे में मुख्यतयाः बताते हैं। इलियट ने एक प्रतिलिपि प्रकाशित की है जिसमें उसने पल्लवों का जहाज युक्त सिक्का दर्शाया है, साथ ही उसने कुछ फोटोग्राफ भी प्रकाशित किये हैं, जिनमें दो सोने के सिक्कों के मुख्य पृष्ठ पर शेर तथा पृष्ठ भाग पर तीन मंजिला भवन दर्शाया है। भवन की आकृति जहाज जैसी दिखाई देती है। इलियट ने एक अन्य सिक्का प्रकाशित किया है जो चांदी का है जिसको 'कुरुम्बर' सिक्का नाम दिया है। इसके मुख्य पृष्ठ भाग पर घोड़ा तथा पृष्ठ भा पर पानी के जहाज की आकृति अंकित है। उसे ही इन्होंने कुरुम्बर का न होकर पल्लवों का होने की संभावना व्यक्त की है।

उपर्युक्त वर्णन के आधार हम हम देखते हैं कि गुप्तों के समकालीन अन्य राजनैतिक शक्तियों ने भी अपने व्यापार–वाणिज्य व सांस्कृतिक महत्व को बनाये रखने के लिए तथा सांस्कृतिक प्रतिष्ठा कायम रखने के लिए सिक्कों का प्रचलन जारी रखा। हम देखते हैं कि गुप्त सम्राटों ने जितनी मात्रा में स्वर्ण मुद्रायें जारी की उतनी मात्रा में उनके समकालीन किसी अन्य शक्ति ने मुद्रायें जारी नहीं की, यद्यपि छोटे शासकों के द्वारा स्वर्ण मुद्रा चलाने का उल्लेख गुप्तों से प्रतिस्पर्धा प्रतीत होता है। यही कारण है कि समकालीन नयी शक्तियों ने गुप्तों का अनुसरण ना करके अपनी स्वतंत्र मुद्राएं चलायी हैं। यह बात और महतवपूर्ण है कि कई बार गुप्तों के स्थान पर कुषाण मुद्रा प्रकारों का अनुकरण किया। इस प्रकार उन्होंने अपनी साख बचाये रखने का प्रयास अवश्य किया। वहीं ये मुद्रायें एक दूसरे के प्रभाव से भी वंचित नहीं रह सकी है। जैसे जैसे कुषाण व शकों का प्रवेश भारत के आन्तरिक भागों में होता गया, उन्होंने हमारे धार्मिक व अन्य प्रतीकों को अपनाया व हमारे गणतंत्रों, राजतंत्रों ने भी उनसे प्रभावित होकर मुद्रायें प्रचलित की। वहीं हम देखते हैं कि इन मुद्राओं के प्रसार से राजाओं का नामकरण, तिथि, साम्राज्य की सीमा, धार्मिक सुधार तथा आर्थिक स्थिति का पता चलता है। कई बार तो गुप्तों के द्वारा अपनाये गये वैष्णव धर्म का अनुकरण किया किन्तु कई बार अपनी स्वतंत्र स्थिति के कारण अन्य धर्मों को भी प्रश्रय दिया, उदाहरणार्थ– नाग शासकों के द्वारा शैव धर्म को अपनाया जाना। वहीं गणतंत्रों की मुद्राओं का उत्तर–पश्चिम भारत से जयपुर, मथुरा, दिल्ली, मालवा में मिलना उनके स्थानान्तरण को प्रदर्शित करता है। कई राजाओं की मुद्राओं पर पहले गरूड़ का अंकन होना व फिर लुप्त होना उनकी स्वतंत्रता का परिचायक है। गुप्त नरेश भी इनसे प्रभावित हुए। यथा–गुप्त नरेश चन्द्रगुप्त द्वितीय ने शक विजय (सौराष्ट्र) के बाद चांदी की मुद्रायें चलायीं। इस प्रकार समय के साथ अभी और शोध कार्य व उत्खन्न होने पर इनके नये संबंध उभर कर आयेंगे, इसमें कोई शंका नहीं है।

संदर्भ एवं टिप्पणियां

1. मजूमदार व अल्तेकर, वाकाटक गुप्त युग, 1968 (हिन्दी प्रकाशन), नई दिल्ली, पृ. 319, ''सातवाहनों के बाद वाकाटक दक्षिणपथ के अधीश्वर हुए, किन्तु उन्होंने उनकी मुद्रा प्रचारित करने की परम्परा को जारी नहीं रखा।'' गोयल श्रीराम, प्राचीन भारत, 2007, पृ. 386, ''वस्तुतः वाकाटकों के सिक्के मिलते ही नहीं।''
2. मजूमदार व अल्तेकर, पूर्वोक्त, पृ. 324, '' अब तक हमें पल्लवों, गंगो, इहवाकुओं या कदम्बों की कोई मुद्रा नहीं मिली है।''
3. उपर्युक्त, पृ. 324
4. मेशराम प्रदीप व गाजभिये वी.एस., वसीम उत्खन्न से प्राप्त वाकाटक सिक्के, जर्नल ऑफ द न्यूमिस्मेटिक सोसाइटी ऑफ इण्डिया (JNSI), 2008, वाल्यूम LXX, पृ. 65–67
5. शास्त्री अजय मित्र, यूनिक क्वाइन ऑफ वाकाटक पृथ्वीसेन द्वितीय, इंडियन क्वाइन सोसाइटी, न्यूज लेटर, नं. 4, नागपुर, अक्टूबर, 1990, पृ. 2
6. शास्त्री अजय मित्र, वाकाटक क्वाइन, द एज ऑफ द वाकाटक, हर्मन पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1992, पृ. 285–294
7. कुलकर्णी प्रशान्त, क्वाइन ऑफ द वाकाटक, न्यूमिस्मेटिक डाइजेस्ट, वाल्यूम 25–26, नासिक 2003, पृ. 65–80
8. बोर्कर आर.आर., वसीम उत्खन्नानादि वाकाटक नानी, पुरातत्वीय शोध, नांदेड़, 2004, पृ. 94–99
9. मजूमदार व अल्तेकर, पूर्वोक्त, पृ. 318
10. वही, पृ. 318
11. मेशराम प्रदीप एस. व ठाकुर अशोक सिंह : ए रेयर रिपोसी गोल्ड क्वाइन ऑफ नल किंग वरहराज फ्रॉम चन्दनखेड़ा एक्स्कवेशन्, JNSI, LXXIII, 2011, पृष्ठ 59–61
12. मेशराम प्रदीप एस. व ठाकुर अशोक सिंह : पूर्वोक्त, पृष्ठ 60 (इन्होंने वी.वी. मिराशी के स्टुडीज इन इण्डोलॉजी, वाल्यूम–3, नागपुर को उद्धृत किया है)
13. निगम एल.एस., एन. यूनिक रिपोसी, (Repousse उभारशैली) गोल्ड क्वाइन ऑफ प्रसन्नामात्र, JNSI, वाल्यूम XLV, पृ. 49–53

14. मजूमदार व अल्तेकर, पूर्वोक्त, पृ. 317–318
15. अहमद निसार, द मित्राज ऑफ पंजाब, JNSI, वाल्यूम XXXIX, 1977, पृ. 52–53
16. दास गुप्ता कल्याण कुमार, JNSI, वाल्यूम XXXIX, 1977, पृ. 49–51
17. दास गुप्ता के.के., ए ट्राईवल हिस्ट्री ऑफ एनसियेन्ट इण्डिया : द न्यूमिस्मेटिक एप्रोच, पृ. 19
18. दास गुप्ता के.के. JNSI वाल्यूम XXXIX, 1977, पृ. 49
19. मजूमदार व अल्तेकर, पूर्वोक्त, पृ. 316
20. गुप्त पी.एल., भारत के पूर्वकालिक सिक्के, 1966, विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक, वाराणसी, पृ. 163
21. मजूमदार व अल्तेकर, पूर्वोक्त पृ. 316
22. वही पृ. 317
23. गुप्त पी.एल., वही, पृ. 157
24. मजूमदार व अल्तेकर, वही पृ. 317
25. वही, पृ. 313
26. वही, पृ. 314
27. वही, पृ. 316
28. वही, पृ. 316
29. वही, पृ. 323
30. वही, पृ. 325
31. जैकब जोस, बनवासी के कदम्बों के सिक्के, JNSI, 2008, LXX, पृ. 68–72
32- रामय्या एस., शालंकायन क्वाइन, JNSI, 1967, Vol. XXIX, पृ. 42-43
33. मजूमदार व अल्तेकर, वही, पृ. 325
34. अली अहमद, विष्णुकुंडी सिक्के, JNSI, 1983, Vol. XLV, पृ. 51–52
35. वही, पृ. 52
36. कृष्णमूर्ति आर., कुछ अप्रकाशित व दुर्लभ सिक्के, JNSI, 1988, वाल्यूम–L, पृ. 33